International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 2; March 2018; Page No. 11-13

स्वातंत्रयोत्तर कविता के मानव मूल्यों में सौन्दर्य बोध

Mamta Vinod Tripathi
Shri Umiya Kanya Mahavidhyalaya Rau, Indore, Madhya Pradesh, India

सारांश
स्वातंत्रयोत्तर कविता में मानवता के परिप्रेक्ष्य में मूल्य–सौन्दर्य की दृष्टि को विकसित करने के लिए कवियों ने नवीन संदर्भों एवं संवेदनाओं को निर्विरोध स्वीकार कर अपनी मानवीय प्रतिबद्धता को प्रामाणिक रूप से स्थापित किया है। स्वतंत्रता के तुरंत बाद लिखी गई कविताओं में मानवीय गुणों की चर्चा व्याप्त है। जिसमें मानवता का संदेश प्रमुख है। एक–दो दशकों बाद रची गई कविताओं में मानव अस्तित्व की बात को प्रबलता से उठाया गया है। इस अस्तित्ववादी विचारधारा में मानव की प्रतिष्ठा को ईश्वर से अधिक मान्यता प्रदान की गई है। कहने का तात्पर्य यह है कि मानवीय अर्थवत्ता ही सर्वोपरि रूप से कवियों ने स्वीकार की है। तमाम विश्व का सौन्दर्य चाहे प्राकृतिक हो या मानवी व्यवहारगत मानवता के परिप्रेक्ष्य में नितांत विकसित होता है। इसी लिए स्वातंत्रयोत्तर काल के कवियों ने मानवतत्व पर बल देते हुए उजागर एवं छद्म मूल्यों को अपनी कविता के विवेच्य विषय के रूप में सहज स्वीकार किया है।
नवीन मानवतावादी विचार–भूमि के परिप्रेक्ष्य में ऐसे मानव की कल्पना नहीं है, जो स्वयं ही पुरूषार्थ बल से नियन्ता भी बन गया है। मानव ऐसी सर्वोपरि शक्ति (अथवा ईश्वर) से निर्मित अति सुन्दर कृति है, जो सभी प्राणियों में सर्वोत्तम एवं उत्कृष्ट है फिर भी वह ईश्वर नहीं है। मानवतावाद ने थोड़े बहुत अंतर से ईश्वर की सत्ता को सदैव माना है। इसलिए कवियों ने मानवता की मूल्यवत्ता को तमाम मानवीय गुणों का स्त्रोत मानते हुए जीवन की नैतिकता और अनैतिकता में स्पष्ट रूप से भेद प्रकट करते हुए कविता का सृजन किया है।
कविता में सौन्दर्य कई प्रकार से निहित होता है। हालांकि कविता की प्रकृति सौन्दर्य अवलम्बित ही होती है। सामान्यतः भावगत एवं कलागत सौन्दर्य के बारे में निरंतर चर्चा होती रहती है। परन्तु कविता में मूल्यगत सौन्दर्य की बात अपना अलग ही स्थान रखती है। आधुनिक जीवन, खास–तौर से स्वतंत्रता के बाद का जीवन भयानक विकृतियों के दौर से गुजर रहा है। अतः ऐसे में कवि की मूल्यगत सौन्दर्य के प्रति चिंता बढ़ जाती है। स्वतंत्रता के बाद तमाम भारतीय कवियों ने मानवीय जीवन में मूल्यगत सौन्दर्य की आवश्यकता को समझते हुए उत्कृष्ट से उत्कृष्ण एवं गर्हित से गर्हित विषयों को उठाकर मानव के वर्तमान एवं भविष्य की मंगलमयता पर विचार करते हुए मूल्यों की अनिवार्यता, धारकता एवं व्यवहारिकता की पारिणामिक सभी दशाओं से परिचित कराने का अपनी कविता के माध्यम से भरसक प्रयत्न किया है।

मूल शब्द: स्वातंत्रयोत्तर कविता, मानव मूल्यों, अस्तित्ववादी विचारधारा

प्रस्तावना
सृष्टि के विकास के साथ–साथ मनुष्य का भावात्मक एवं बौद्धिक विकास भी निरंतर होता रहा है, इसलिए उसमें समय समय पर विशिष्ट गुणों का प्रदुर्भाव होता रहा। निरन्तर विशिष्ट गुणों को प्राप्त करते रहने के कारण मनुष्य सृष्टि के केन्द्र बिन्दु के रूप में माना जाने लगा, क्योंकि उसी के कारण सृष्टि की अर्थवत्ता में ही मूल्यों की अवधारणा का अधार होता है। मूल्य चाहें विशुद्ध रूप से नैतिकता पर ही आधारित क्यों न हो, उसमें सौन्दर्य की अभिव्याप्ति अनिवार्य रूप से होती है।
स्पष्टतः सौन्दर्यानुभूति वह स्थिति है, जब हम किसी वस्तु–सत्य की सापेक्षता से अद्वितीयता का अनुभव करते है और वह अद्वितीयता हमारे ऐन्द्रिक बोध से उठकर अभिरूचि को परिष्कृत करके तृप्ति का बोध करा देती है।[1] प्रकरान्तर से ऐसे बोध की अद्वितीयता में मूल्यों की सघनता व्याप्त होती है।
सामान्यतः मूल्यों की अवधारणा को आर्थिक विषयों के परिप्रेक्ष्य में समझा जाता है। इसीलिए मनुष्य की उच्चतर चेतना के विकास की विशिष्टता के प्रति महत्वपूर्ण दृष्टिकोण का प्रतिपादन कम ही हो पाता है। वास्तव में मूल्य की अवधारणा आर्थिक जगत की तुलना में मानसिक जगत में अपेक्षाकृत उच्च स्तर की भूमिका अदा करती है। हालांकि आत्मिक मूल्य आर्थिक मूल्य से कहीं अधिक गूढ़ है।[2] इसी गूढ़ता में ये मन के सद् एवं सौन्दर्य पक्ष को प्रभावित करते है।
सौन्दर्य के दो पक्ष होते है। पहला वह जो हमें प्रेक्षक का दृश्य देता है और दूसरा वह जो हमें इन सबके माध्यम से एक नये संस्कार और सार्थक अर्थ की ओर ले जाता है। सौन्दर्य की गतिशीलता में ही यह गुण होता है कि वह हमारी सम्पूर्ण प्रज्ञा का अनुभूति के साथ–साथ मूल्य बोध की ओर उन्मुख करता है। जब हम यह कहते है कि अमुक वस्तु मुझे सुन्दर लगी, तो प्रायः उसके साथ अर्थ भी छिपा रहता है कि जो वस्तु सुन्दर लगी वह अच्छी भी लगी। ''सुन्दर'' जहां केवल रचना बोध का परिचायक है, वही उस रचना को उपलब्धि के रूप में मूल्यांकन की ओर भी ले जाता है और तब इसी दशा में सौन्दर्य के साथ–साथ ही अभिरूचि का प्रश्न भी उठता है। मूल्य अपने में स्वतन्त्र नहीं होते। वे सदैव सापेक्षता में विकसित होते है। सौन्दर्य के साथ इसी अभिरूचि का महत्व है।[3] सौन्दर्य मूल्य की अर्थवत्ता को अभिभूत करने के लिए अभिरूचि प्राथमिक रूप से अनिवार्य है।
विशुद्ध एवं स्वस्थ्य अभिरूचि की दशा में विवेक भी समान रूप से विद्यमान होता है। इसी दशा में सौन्दर्य को तात्विक रूप से अनुभूत किया जा सकता है। ''सौन्दर्य की अवधारणा एक मूल्य की अवधारणा है, जिसकी कल्पना मनुष्येत्तर सत्ता के रूप में नहीं की जा सकती। वस्तुतः मनुष्य ही प्रकृति के नाना उपादनों से रू–ब–रू होता है, उनमें अपनी जैविक और सामाजिक विकास की भिन्न–भिन्न अवस्थाओं में भिन्न–भिन्न तरह से टकराता है और इस समूचे क्रम में उन्हें सुन्दर या असुन्दर के रूप में पहचानता है।[4]
आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के मत में सुन्दर वस्तु से पृथक कोई पदार्थ

नही, इस मत पर विचार किया जाये तो स्पष्ट हो जाता है कि आचार्य शुक्ल सौन्दर्य–बोध के वस्तुगत स्वरूप पर ही जोर देते है। उनका आग्रह सौन्दर्य को वस्तुवादी दृष्टि से देखना है। वास्तव में वस्तु–परक सौन्दर्य का बोध और उसकी पहचान मनुष्य ही करता है। सौन्दर्य बोध की प्रक्रिया वस्तु के सम्पर्क से मानव के अन्तर्मन में घटित होती है ''कुछ रूप–रंग की वस्तुएं ऐसी होती है, जो हमारे मन में आते ही थोड़ी देर के लिए हमारी सत्ता पर ऐसा अधिकार कर लेती है कि उसका ज्ञान ही हवा हो जाता है और हम उन वस्तुओं की भावना के रूप में ही परिणत हो जाते है।[5]

मानव के अन्तर्जगत् का निर्माण प्रतिबिम्बों के माध्यम से होता है, वास्तव में मनुष्य के अन्तर्मन में उन वस्तुओं के बिम्ब होते है, जिनसे उसका साक्षात्कार हुआ है। बिम्बों से निर्मित मनुष्य का अन्तर्जगत् अत्यन्त विकसित है। विकास प्रक्रिया में अर्जित प्रतिस्मरण क्षमता ने मनुष्य को पशुओं से एकदम अलग धरातल पर पहुंचा दिया। बिम्बों से प्रत्यय के निर्माण की प्रक्रिया सौन्दर्य–मूल्यों के निर्धारण में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रतिस्मरण की क्षमता के बगैर प्रत्यय विकसित नहीं हो सकते, और प्रत्ययों के बगैर सौन्दर्य–मूल्य की कल्पना नहीं की जा सकती।[6]

ऐन्द्रिक सम्वेदनों के माध्यमों से वस्तु और गति के बिम्ब मानव मस्तिष्क में पहुंचते है जिन्हें दो स्तरों पर ग्रहण किया जाता है। प्रत्यक्ष और सम्वेदन बिम्ब की प्रत्यक्षता अनुभूति को क्रियान्वित करती हे, अनुभूति के क्रियान्वित होते ही मनःपटल पर बिम्ब सगुण और अर्थवान हो जाता है। यह गुणवत्ता और अर्थवत्ता उपयोग और अनुरंजन में परिणित हो जाती है। बिम्बों और प्रत्ययों के निर्मित अन्तर्मन में सौन्दर्य–बोध का विकास होता है।

''सौन्दर्य–मूल्य जीवन प्रक्रिया में विकसित हुए है। इसीलिए जीवन प्रक्रिया से उनका अविच्छेद सम्बन्ध है। जीवन के बगैर न अनुभूति का अस्तित्व सम्भव है और न सौन्दर्य का। जीवन–प्रक्रिया में बाह्य जगत को ग्रहण करने के लिए विकसित की गयी युक्तियों में निहित आत्मगत मूल्य ही सौन्दर्य है। अतएव सौन्दर्यानुभूति के लिए आत्मगत और वस्तुगत पक्षों की मौजूदगी समान रूप से अनिवार्य है। इसी अर्थ में सौन्दर्य मूल्य वस्तुगत और आत्मगत के द्वन्द्वात्मक अन्तः सम्बन्धों का प्रतिफल है। यह द्वन्द्वात्मकता सौन्दर्यानुभूति की प्रक्रिया में निसर्गतः अन्तर्निहित है। इसके लिए आत्म और वस्तु में सामंजस्य या सन्तुलन के आरोपण की जरूरत नहीं होती। इस द्वंद्व के बगैर सौन्दर्य–बोध, कोई भी बोध विकसित नहीं हो सकता।[7]

स्वातंत्रत्योत्तर कविता में – मानव मूल्य और सौन्दर्य दृष्टि

प्रमुख रूप से स्वातंत्रयोत्तर कविता के नवीन भाव–बोध का केन्द्र समकालीन मानव और उसकी परिस्थितियां है। स्वातंत्रयोत्तर कविता की सौन्दर्य चेतना यथार्थ से प्रभावित है। सम्वेदना के विविध आयामों में सौन्दर्यगत मानव–मूल्यों की अभिव्यक्ति आधुनिक मानव के समकालीन परिवेश के जीवन यथार्थ से सम्बद्ध है। इसलिए स्वातंत्रत्योत्तर कविता का सौन्दर्य सम्बन्धी निश्चित मत या सिद्धांत नहीं बन पाया।

काव्य भले ही कैसा हो, उसमें निश्चित रूप से कमोबेश सौन्दर्यगत मानव मूल्य होते है। वास्तव में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् से युक्त काव्य ही उच्च कोटि का माना जाता है। इनमें भी सौन्दर्य को विशिष्ट माना जाता है, जिसके माध्यम से काव्यगत आनंद का उद्रेक और रसानुभूति होती है। काव्य का सृजन और मनन सौन्दर्य द्वारा प्रेरित होता है। पावस में कल–कल करते निर्झर, मयूरों के नृत्य, मेघों के गर्जन, शरद की शुभ ज्योत्सना, पूले कॉस, ऋतुराज में मुकुलित पुष्पों को देखकर सरस हृदय प्रफुल्लित हो उठता है। यही स्थूल सौन्दर्य जब काव्य में वर्णित होता है तो उसकी मनोमुग्ध करने वाली प्रवृत्ति सहस्त्र गुना बढ़ जाती है। वस्तुतः मन को मुग्ध करने वाली, आत्मानंद प्रदान करने वाली शक्ति ही काव्य का प्राण है।[8]

आधुनिक युग की चेतना ने काव्याभिव्यक्ति में कई तरह की विविधता भर दी है। स्वातंत्रयोत्तर कविता की सौन्दर्य चेतना नित् नये रूपों को ग्रहण करती रही है। स्वातंत्रयोत्तर कविता की बहुआयामी सम्वेदना में सौन्दर्यगत मानवीय मूल्य कई दृष्टियों से परम्परायुक्त भी है और परम्परामुक्त भी। कहने का तात्पर्य यह है कि स्वातंत्रयोत्तर कवियों ने मानवीय मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में परम्परा से सम्बद्ध सौन्दर्यगत मानवीय मूल्यों को भी स्वीकार किया और आधुनिक जीवन संदर्भ में नवीन मूल्यों की तलाश एवं स्थापना का प्रयास भी किया है। ज्यादातर परम्परागत मूल्यों की सौन्दर्य चेतना को परिवर्तित रूप में ही अभिव्यक्त किया है –

''दिये दरस सीता ने वे हैं गौरव की गम्भीर सी मूर्ति
उन्हें देख मन में कुछ भय, कुछ आदर की होती है स्फूर्ति
सचमुच वे विदेह ललना है, गुरूता से उनकी तुलना है
मुख प्रखर युति से आलोकित, आँखों में अति की छलना है।''[9]

यहां कवि ने नारी के मानवीय अस्तित्व के गौरव की गम्भीरता को दर्शाया है। ऐतिहासिक पात्र, सीता में भारतीय नारी के शील आदि मूल्यों के गम्भीर सहज प्रवृत्ति को दर्शाया है।

स्त्री पुरूष के चिरन्तर सम्बन्धों के बीच रागात्मकता विषम आकर्षण में अद्वितीय सौन्दर्यगत् मानव–मूल्य है। स्वातंत्रयोत्तर कवि ने ऐसे विषम आकर्षण के सौन्दर्य को मूल्य–मर्यादा की भीत पर चित्रित किया है –

''बीच खड़ी है हम दोनों के
अभी न जाने कितनी रातें
अभी बहुत दिन करनी होंगी
केवल इन गीतों में बातें।''[10]

कुछ मूल्य ऐसे है, जिन्हें परम्परागत रूप से प्राप्त किया जाता है। स्त्री पुरूष के बीच मर्यादा, शीलता और लज्जा जैसी धारणाएं मूल्यों के रूप में ही परिचालित रहती है। सामाजिक मानवीय सम्बन्धों में ऐसे अनेक मूल्य अनुस्यूत होते है, जिनकी भावकता अत्यन्त पवित्रता से आपूरित होती है –

''भद्रे ! तुम पवित्र यह बहिन शिखा
जो कहीं चेतना, कहीं प्रतिज्ञा कहीं ऋचा
जो कहीं साधना स्वस्ति, स्वधा की, स्वाहा की
जो स्फूर्ति कहीं,
श्रृद्धा, निष्ठा, निष्पत्ति कहीं
तुम ममता
लेकिन मनस्विता से भिन्न नहीं।''[11]

यहां केदारनाथ मिश्र प्रभात ने शिवाजी की माता के ऐसे चित्र को प्रस्तुत किया है जिसमें नारी का गौरव, तमाम मानवीय मूल्यों के शिखर पर आरूढ़ होता है। भारतीय संस्कृति के आरभिक काल से ही माँ के रूप में नारी का व्यक्तित्व सम्पूर्णता प्राप्त करता है, जिसमें विभिन्न मानवीय–मूल्यों का सौन्दर्य सहज रूप से दिखायी देता है। ऐतिहासिक पात्रों के माध्यम से कवियों ने एक ओर नारी के उस व्यक्तित्व का चित्रण किया है, जिसमें कई भौतिक मूल्य

समाहित है। कुछ ऐसे चित्रण भी किए गए है, जिनमें नारी के व्यक्तित्व में आध्यात्मिक मूल्यों की भी परिणति हुई है।

स्वातंत्रयोत्तर कविता में मूल्यों के अस्तित्व के संकट की बात पर बराबर ध्यान दिया गया है। यदि जीवन में मनुष्य सत्य की स्वीकृति सहर्ष रूप से करता है तो उसके जीवन में शिव का आविर्भाव स्वतः हो जाता है और सौन्दर्य–बोध उपर्युक्त प्रवृत्ति के साथ छाया की तरह चला आता है या फिर सौन्दर्य–बोध की दृष्टि जब सभी आयामों में विकसित होती है तो सभी मानवीय–मूल्य सामूहिक रूप से क्रियाशील हो जाते है। सारांशतः मनुष्य के जीवन में सत्य सभी मूल्यों का अग्रज है।

मानव जीवन से सत्य जैसे–जैसे दूर होता जाता है वैसे ही वैसे जीवन में मूल्य हीनता बढ़ती जाती है।

''मूल्य और मानवी उदात्ताएं
जब सार्वजनिक जीवन में
हो जाती है शेष
तभी होता है युद्ध
युद्ध का घोष
युधिष्ठिर हों
या हों कृष्ण
युद्ध का एक मात्र है तर्क
विजय के सम्मुख,
मूल्यवानता का क्या है अर्थ।''[12]

सत्य की भांति सौन्दर्य भी शाश्वत मूल्य है। कवि का अन्तर्मन जब सौन्दर्य सम्वेदना से अनुप्राणित हो जाता है, तब उसकी दृष्टि में सौन्दर्य विस्तृत होता जाता है और कभी–कभी तो उसकी दृष्टि सौन्दर्यानुभूति की अलौकिक झलक देने लगती है।

कवि की अनुभूति वर्तमान जीवन के यथार्थ से पूर्णतः जुडी हुई है। उसने ऐसे यथार्थ को अभिव्यक्त किया है, जिसके कारण मानवीय सत्ता और सौन्दर्य–परक दृष्टिकोण विसंगति और विद्रूपताओं में बदल गया है। काव्य सृजन के मूल में समकालीन कवियों का दृष्टिकोण मानवीय मूल्यों को जीवन्त रखने के उद्देश्य से आपूरित है। वहीं दूसरी ओर नैसर्गिक सौन्दर्य की जीवन से सम्बद्धता बनाये रखने का भी प्रयास किया है।

स्वातंत्रयोत्तर काल के ज्यादातर कवियों ने आम जीवन और उसके परिवेश को ही अपनी कविता का विषय बनाया है। विषयगत यथार्थता में कवि की चिंता मानवीय मूल्यों को लेकर बराबर बनी हुई है। आज की कविता के सामने एक ओर स्वयं के तथा दूसरी ओर मानवता के अस्तित्व को बचाये रखने का संकट है। आधुनिक जीवन की गतिशीलता में मानव का दृष्टिकोण निरंतर वस्तुपरक हो रहा है, ऐसी स्थिति में मानवता को जीवंत रख पाना काफी कठिन मामला है। मानवता की रक्षार्थ कवि अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को भी दांव पर लगाने के लिए तत्पर है।

हालांकि स्वातंत्रयोत्तर कवियों ने अपनी कविता के माध्यम से मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित सुरक्षित रखने के लिए हर सम्भव प्रयास किया है। बालकृष्ण शर्मा ''नवीन'' ने अपने ''उर्मिला'' काव्य में मानवीयता के संदर्भ में काफी महत्वपूर्ण चित्रण किया है। इस काव्य में आद्यन्त मानवतावाद को देखा जा सकता है। वन में रहने वाले अशिक्षित, वनैले, ज्ञान के अभाव में आशंका और भय से घिरे हुए अंध–विश्वासी मानवों की रक्षार्थ लक्ष्मण वन जाना श्रेयस्कर समझते है। अमानवीय जीवन जीने वाले मानवों के हितार्थ उर्मिला लक्ष्मण को वन गमन के लिए सहर्ष अनुमति देती है, उसका हृदय मानवीय दृष्टि से ओत–प्रोत है, मानवता के प्रति उसका लगाव प्रशंसनीय है।

स्वातंत्रयोत्तर काल में कवियों ने मानव से सम्बन्धित तमाम मूल्यों की तलाश करते हुए उनके सौन्दर्य–भाव को जीवन में प्रतिस्थापित करने की भरसक चेष्टा की है। सावतें दशक एवं उसके बाद की कविताओं में प्रकृति के विभिन्न अंगोपांगों से बिम्ब एवं प्रतीक ग्रहण करके कवियों ने ताजे संदर्भो में प्रयुक्त बहुत सामान्य से जीवों के माध्यम से परिवर्तन की आकांक्षा एवं मानव के ''मानव'' होने की अर्थवत्ता को खोजा है :

''इस चिड़िया की आवाज
आग जगने के बाद
जंगल में/आग लगने से पहले का जंगल खोज रही है।''[13]

– – –

''इसलिए लोगों / मेरी कविता हर उस इंसान का बचान है
जो बंदूकों के गोदाम से/अनाज की ख्वाहिश रखता है
मेरी कविता/हर उस आंख की दरख्वास्त है
जिसमें आंसू है।''[14]

कवि ने यहां मानवता की अन्तर्कराह को महसूस किया है, उसने हर ऐसे मानव की अन्तर्व्यथा को समझा है, जिसका जीवन दो जून की रोटी के हक के लिए निरंतर संघर्षरत है, फिर भी उसे वह उपलब्ध नहीं होता है। मानवता की पक्षधरता में मूल्य–सौन्दर्य को जानने वाले तमाम कवियों की कविता में इस तरह के अनेक उदाहरण मिल जाते है। जीवन के ज्वलंत यथार्थ को अभिव्यक्त करने के पीछे कवि की मंशा स्पष्ट दिखायी देती है। वह जीवन की अनियमित व्यवस्थाओं के नग्न चित्र प्रस्तुत करके उनमें मूलभूत सुधार करने की प्रेरणा देता है।

सदंर्भ

1. लक्ष्मीकांत वर्मा, नये प्रतिमान पुराने निकष, पृ. 207
2. पाल बैलरी, दि क्रिएटिव प्रोसेस, पृ. 94
3. लक्ष्मीकांत वर्मा, नये प्रतिमान पुराने निकष, पृ. 223
4. अजय तिवारी, प्रगतिशील कविता के सौन्दर्य मूल्य, पृ. 74
5. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, ''रस मीमांसा'' पृ. 24
6. अजय तिवारी, प्रगतिशील कविता में सौन्दर्य मूल्य, पृ. 77, 78
7. अजय तिवारी, प्रगतिशील कविता में सौन्दर्य मूल्य, पृ. 78
8. डॉ. गोविंद रजनीश, स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी कविता, पृ. 122
9. बालकृष्ण शर्मा नवीन – उर्मिला – द्वितीय सर्ग, पृ. 84
10. हरिवंशराय बच्चन, प्रणय पत्रिका गीत – पृ. 27
11. केदारनाथ मिश्र प्रभात – राष्ट्रपुरूष – द्वितीय सर्ग – पृ. 27, 28
12. नरेश मेहता – महाप्रस्थान, पृ. 44, 45
13. लीलाधर जगूड़ी – बची हुई पृथ्वी – पृ. 47
14. लीलाधर जगूड़ी – घबराये हुए शब्द – पृ. 36